चौमास



राजगोपाल सिंह

लब्धप्रतिष्ठित ग़ज़लकार श्री राजगोपाल सिंह का नवीनतम काव्य-संग्रह *चौमास* सुधी काव्यप्रेमियों के सम्मुख प्रस्तुत है। राजगोपाल सिंह वर्तमान हिन्दी ग़ज़ल जगत् में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं आदरणीय ग़ज़लकार माने जाते हैं। हिन्दी ग़ज़ल की दुनिया में राजगोपाल सिंह की ग़ज़लें 'मील का पत्थर' समझी जाती हैं। लेकिन, इस अपूर्व ख्यातिप्राप्त ग़ज़लकार की क़लम ने कमालतरीन ग़ज़लों के साथ-साथ कुछ अद्भुत गीत और दोहे भी रचे हैं जिनकी एक ख़ूबसूरत बानगी इस काव्य-संग्रह में मिलती है। 'चौमास' में शामिल उनके मात्र 9 गीत और 29 दोहे 'गीत' एवं 'दोहा' विधाओं पर भी उनकी महारत के साक्षी हैं। निःसन्देह यह काव्य-संग्रह राजगोपाल सिंह को समग्र रूप में सामने लाता है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि 'चौमास' की ग़ज़लें, गीत व दोहे राजगोपाल सिंह की प्रसिद्धि में चार चाँद लगाएँगे।

चौमास सरीखी भव्य एवं संग्रहणीय कृति के लिए राजगोपाल सिंह को साधुवाद एवं संग्रह की सफलता हेतु कोटिशः शुभकामनाओं सहित—

लक्ष्मण
मुम्बई

लब्ध
राजगोपा
संग्रह चौ
सम्मुख
वर्तमान
महत्त्वपू
माने जात
में राजग
का पत्थ
इस अपू
क़लम ने
साथ कु
रचे हैं
इस क
'चौमास
गीत औ
विधाओं
हैं। नि
राजगोपा
लाता है

संग्रहणी
सिंह क
सफलता
सहित—

चौमास

अमृत प्रकाशन
1/5170, लेन नं. 8, बलबीर नगर
शाहदरा, दिल्ली-110032
दूरभाष : 22573468

चौमास

(राजगोपाल सिंह का काव्य संसार)

राजगोपाल सिंह

अमृत प्रकाशन
शाहदरा, दिल्ली-110032

ISBN 81-8280-015-3

चौमास

प्रथम संस्करण : 2005

मूल्य : 100.00

प्रकाशक
अमृत प्रकाशन
1/5170, लेन नं. 8, बलबीर नगर,
शाहदरा, दिल्ली-110032
दूरभाष : 22573468

आवरण सज्जा
मनीश डागा
दूरभाष : 9868303600

मुद्रक
व्योमवर्ड्स
मंगलभवन, लेन नं. 8, बलबीर नगर,
शाहदरा, दिल्ली-110032

शब्द-संयोजन (हिन्दी)
विनायक कम्प्यूटर्स
दूरभाष : 9810554205

CHAUMAS
Poetry by Rajgopal Singh

Rs. 100.00

जीवनसंगिनी
सविता
को

बेटियाँ बाबुल के घर जब लौटती थीं तीज पर
टहनियाँ नीचे सरक आती थीं झूलों के लिए

आँखों ने चौमास जिया

बादशाहों को भी कब मयस्सर हुई
ज़िन्दगानी जो अहले-क़लम जी लिए

राजगोपाल सिंह का यह लासानी शे'र अगर दौरे-हाज़िर के किसी क़लमकार पर पूरा उतरता है, तो वह क़लमकार है ख़ुद राजगोपाल सिंह। इस बेपनाह शायर को सुनना या पढ़ना एक ऐसा पुरसुकून अहसास है जिसे बार-बार महसूस करने को जी चाहता है। इस दौर के हिन्दी ग़ज़लकारों में शायद वह अकेला ऐसा ग़ज़लकार है जिसे जितना भी सुना या पढ़ा जाए कम है। इधर, हिन्दी कविता में ग़ज़लों का चलन बड़ी तेज़ी से बढ़ा है। इसके बावजूद कटु सत्य यह है कि ज़ियादहतर हिन्दी ग़ज़लें अरूज़ (शिल्प) की नज़र से गई-बीती होती हैं। वैचारिक विपन्नता, अधकचरी सलाहियत, न सीखने की प्रवृत्ति, ग़ज़ल के तग़ज़्ज़ुल से अपरिचय, अवाँछित पूर्वाग्रहों और 'हम चुनीं दीगरे नेस्त' की मानसिकता के चलते बड़े से बड़े हिन्दी ग़ज़लकार की ग़ज़लें भी प्रायः निराश ही करती हैं। ऐसे में, राजगोपाल सिंह जैसे कुल जमा चार-पाँच समर्थ ग़ज़लकारों की ही ग़ज़लें हिन्दी ग़ज़ल के बेहतर भविष्य की आस बँधाती हैं। इस दृष्टि से, राजगोपाल सिंह के नये काव्य-संग्रह **"चौमास"** की 51 चुनींदा ग़ज़लें जहाँ एक ओर हिन्दी ग़ज़ल की राह में उजाले बिखेरती नज़र आती हैं वहीं दूसरी ओर उसे इस दौर के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ग़ज़लकारों में से एक होने का सम्मान भी दिलाती हैं।

राजगोपाल सिंह को क़रीब से जाननेवाले जानते हैं कि वह जितने

बड़े क़द का ग़ज़लकार है, ठीक उतने ही बड़े क़द का गीतकार भी है। हालाँकि वह अपने इन नायाब गीतों को बहुत कम, कभी-कभार ही सामने लाता है, लेकिन जिन लोगों ने उसके गीत सुने हैं, उनके लिए यह फ़ैसला कर पाना हमेशा मुश्किल रहा है कि राजगोपाल सिंह ग़ज़लकार बड़ा है या गीतकार। मैं ख़ुद को बेहद ख़ुशनसीब मानता हूँ कि मैंने राजगोपाल की इस पवित्र 'गीत-गंगा' में जी-भर डुबकियाँ लगाने का सौभाग्य पाया है। प्रस्तुत संग्रह की रूपरेखा तय करते हुए, उचित या अनुचित यह मेरी ही ज़िद रही कि "चौमास" में गीत-गंगा भी प्रवाहित होगी। मैं जानता हूँ कि संग्रह में शामिल प्रत्येक गीत सुधी पाठकों के दिलों में उतरता चला जाएगा।

"चौमास" की त्रिधारा में तीसरी धारा है, राजगोपाल सिंह के दोहे। संग्रह में सम्मिलित 29 ख़ूबसूरत दोहों के विषय में मैं कुछ नहीं कहूँगा। इन बहुचर्चित दोहों के जादुई असर से आप सब स्वयं परिचित हैं। आज शायद ही कोई ऐसा मंच या महफ़िल हो जहाँ राजगोपाल सिंह काव्य पाठ करे और उसे उसके दोहे (विशेषत: बेटियों पर कहे गए दोहे) सुनाए बिना छोड़ दिया जाय। सचमुच, उसका हर दोहा अपनी मिसाल आप ही है।

अन्त में, दोस्तो! "चौमास" में राजगोपाल सिंह की यत्र-तत्र बिखरी ग़ज़लों, गीतों और दोहों को यकजा किया गया है। इस संग्रह में राजगोपाल सिंह के काव्य संसार को समग्र रूप में जाना जा सकता है। सुधी पाठकों को यह प्रयास कैसा लगा, यह जानने की अत्यन्त उत्सुकता रहेगी।

"**चौमास**" जैसे महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ की अद्वितीय प्रस्तुति के लिए राजगोपाल सिंह को दिली मुबारकबाद और संग्रह की ख़ातिरख़्वाह पिज़ीराई की दुआओं के साथ...

—मंगल 'नसीम'

मंगल भवन
1/5170, लेन नं. 8, बलबीर नगर,
शाहदरा, दिल्ली-110032
दूरभाष : 22573468

ग़ज़लें

तुम हमें नित नई व्यथा देना
हम तुम्हें रोज़ इक ग़ज़ल देंगे

विदेश जाने का मन है मगर ये सोचूँ हूँ
कि हो न जाऊँ कहीं दर-ब-दर ये सोचूँ हूँ

चला तो जाऊँ मगर कैसे भूल पाऊँगा
चहकते दोस्त, महकती डगर ये सोचूँ हूँ

यहाँ की चाँदनी, ठण्डी हवा, महकती फ़ज़ा
मिलेंगे ऐसे ही मौसम उधर? ये सोचूँ हूँ

यहाँ तो ममता के आँचल की छत्रछाया है
कटेगी कैसे वहाँ दोपहर ये सोचूँ हूँ

वहाँ के लोग तो बारूद की दुकानें हैं
झुलस न जाएँ कहीं मेरे पर ये सोचूँ हूँ

मौज-मस्ती के पल भी आएँगे
पेड़ होंगे तो फल भी आएँगे

आज की रात, मुझको जी ले तू
चाँद-तारे तो कल भी आएँगे

चाहतें दोस्ती की पैदा कर
रास्ते तो निकल भी आएँगे

आइने लाए जाएँगे जब तक
लोग चेहरे बदल भी आएँगे

अजनबी बादलों से क्या उम्मीद
आए तो लेके जल भी आएँगे

चाँदनी में नहा रहा है नीम
मन ही मन मुस्करा रहा है नीम

ख़ुशबुओं को पवन-झकोरों से
और नज़दीक ला रहा है नीम

चुप है धरती, ख़मोश है अम्बर
सबको लोरी सुना रहा है नीम

दाद देती हैं टहनियाँ झुककर
फिर ग़ज़ल गुनगुना रहा है नीम

ऐसी क़द्रें कि जिनसे हम, हम थे
याद फिर से दिला रहा है नीम

एक हरा अहसास जिया
मैं पेड़ों के पास जिया

यूँ उसका विश्वास जिया
जैसे इक संत्रास जिया

वो भी तो इक सागर था
एक मुकम्मल प्यास जिया

अधरों पर मुस्कान रही
आँखों ने चौमास जिया

सीता सँग तो राम रहे
उर्मिल ने 'बनवास' जिया

कुछ तो अपने और मेरे दरमियाँ रहने भी दे
दूरियाँ चुभती हैं फिर भी दूरियाँ रहने भी दे

ख़्वाब है तो टूट भी जाएगा थोड़ी देर में
तू मेरी पलकों पे अपनी उँगलियाँ रहने भी दे

मैं मुकम्मल हो गया तो देवता बन जाऊँगा
मुझमें हैं जो ख़ामियाँ वो ख़ामियाँ रहने भी दे

इनसे मत उम्मीद रख ये रौशनी देंगे तुझे
झील में तारों की हैं परछाइयाँ रहने भी दे

फेंक मत इनको कि जब अपनों से मन भर जाएगा
हौसला देंगी तुझे ये चिट्ठियाँ रहने भी दे

मैं रहूँ या न रहूँ, मेरा पता रह जाएगा
शाख़ पर यदि एक भी पत्ता हरा रह जाएगा

बो रहा हूँ बीज कुछ सम्वेदनाओं के यहाँ
ख़ुश्बुओं का इक अनोखा सिलसिला रह जाएगा

अपने गीतों को सियासत की ज़ुबां से दूर रख
पँखुरी के वक्ष में काँटा गड़ा रह जाएगा

मैं भी दरिया हूँ मगर सागर मेरी मन्ज़िल नहीं
मैं भी सागर हो गया तो मेरा क्या रह जाएगा

कल बिखर जाऊँगा हरसू, मैं भी शबनम की तरह
किरणें चुन लेंगी मुझे, जग खोजता रह जाएगा

बाग़ के वातावरण से बेख़बर सूरजमुखी
जिस तरफ़ सूरज चले देखे उधर सूरजमुखी

भोर की पहली किरन कुछ कह गई है कान में
लाज के मारे हुई है गुलमुहर सूरजमुखी

ओस के क़तरे हैं मानो माँग में मोती सजे
लग रही है ख़ूबसूरत किस क़दर सूरजमुखी

देह सारी आँसुओं से भीगकर तर हो गई
याद में रोई है किसकी रात भर सूरजमुखी

प्रीत सूरज से मगर अर्पित हुई पाषाण पर
हो गई काग़ज़ सरीखी सूखकर सूरजमुखी

मौन ओढ़े हैं सभी, तइय्यारियाँ होंगी ज़रूर
राख के नीचे दबी चिंगारियाँ होंगी ज़रूर

आज भी आदम की बेटी हंटरों की ज़द में है
हर गिलहरी के बदन पर धारियाँ होंगी ज़रूर

नाम था होठों पे सागर, पर मरुस्थल की हुई
उस नदी की कुछ-न-कुछ लाचारियाँ होंगी ज़रूर

हमने ऐसे रंग फूलों पर कभी देखे न थे
तितलियों के हाथ में पिचकारियाँ होंगी ज़रूर

एक मौसम जाए है तो एक मौसम आए है
आज है मातम तो कल किलकारियाँ होंगी ज़रूर

अजनबी नज़रों से अपने आपको देखा न कर
आइनों का दोष क्या है? आइने तोड़ा न कर

यह भी मुमकिन है ये बौनों का नगर हो इसलिए
छोटे दरवाज़ों की ख़ातिर अपना क़द छोटा न कर

यह सनक तुझको भी पत्थर ही न कर डाले कहीं
हर किसी पत्थर को पारस जानकर परखा न कर

रात भी गुज़रेगी, कल सूरज भी निकलेगा ज़रूर
ये अँधेरे चन्द लमहों के हैं, जी छोटा न कर

काँच सारी खिड़कियों के धूप ने चटका दिये
वक़्त की चेतावनी को और अनदेखा न कर

ज़िन्दगी है जागती आँखों के सपनों का सफ़र
झील में ज्यों झिलमिलाते चाँद–तारों का सफ़र

उम्रभर रौशन किए अश्कों से लफ़्ज़ों के चराग़
इस तरह से तय किया है हमने गीतों का सफ़र

शह्र से जब भी हम अपने गाँव लौटे, यूँ लगा
करके तय आए हों घर जैसे कि सदियों का सफ़र

शाख़ से टूटे तो आँधी साथ अपने ले उड़ी
ख़त्म हो जाने कहाँ इन ज़र्द पत्तों का सफ़र

एक पल नज़रें उठीं, आँखें मिलीं, फिर झुक गईं
लौट आए करके हम जैसे कि जन्मों का सफ़र

हमसे करते रहे दिल्लगी, रात भर
नींद भी, ख़्वाब भी, आप भी रात भर

रात भर बादलों ने उड़ाई हँसी
छटपटाती रही इक नदी रात भर

ऐसा लगता है मौसम का रुख़ देखकर
बर्फ़ शायद कहीं पर गिरी रात भर

फूल बनते ही कल जो बिखर जायेगी
याद आती रही वो कली रात भर

चाँदनी पर ही सब ने कहे शे'र क्यों
सोचती ही रही तीरगी रात भर

कब का भूला पल आँखों में उभरा है
यादों का बादल आँखों में उभरा है

पाँव पसारे हैं जब भी सन्नाटे ने
भारी कोलाहल आँखों में उभरा है

पत्थर ही पत्थर पलकों से टकराये
जब-जब शीशमहल आँखों में उभरा है

जब भी सूरज ने आँखें दिखलाई हैं
आँगन का पीपल आँखों में उभरा है

जिसने आँसू पोंछे मेरा मुख चूमा
वो मैला आँचल आँखों में उभरा है

इन चराग़ों के उजालों पे न जाना, पीपल
ये भी अब सीख गए आग लगाना, पीपल

जाने क्यूँ कहता है ये सारा ज़माना, पीपल
अच्छा होता नहीं आँगन में लगाना पीपल

गाँव में ज़िन्दा है अब भी वो पुराना पीपल
कितने गुमनाम परिन्दों का ठिकाना पीपल

ख़ुद में सिमटा है अमीरी का ज़माना, पीपल
अपने ही पास रखो अपना ख़ज़ाना पीपल

आँधियों का कोई मुख़बिर न छुपा हो इनमें
हर मुसाफ़िर से न हर बात बताना पीपल

चढ़ते सूरज को लोग जल देंगे
जब ढलेगा तो मुड़ के चल देंगे

मोह के वृक्ष मत उगा ये तुझे
छाँव देंगे न मीठे फल देंगे

गँदले-गँदले ये ताल ही तो तुम्हें
मुस्कराते हुए कँवल देंगे

तुम हमें नित नई व्यथा देना
हम तुम्हें रोज़ इक ग़ज़ल देंगे

चूम कर आपकी हथेली को
हस्त-रेखाएँ हम बदल देंगे

चन्द सुधियों की सूखी हुई पत्तियाँ
रोज़ आँगन से चुनती रहीं आँधियाँ

अपनी धुन में नदी गुनगुनाती रही
छटपटाती रहीं रेत पर मछलियाँ

मेरे आँगन में ख़ुशियाँ पलीं इस तरह
निर्धनों के यहाँ जिस तरह बेटियाँ

गिरके आकाश से नट तड़पता रहा
सब बजाते रहे जोश में तालियाँ

मैं हूँ सूरज, मेरी शायरी धूप है
धूप रोकेंगी क्या काँच की खिड़कियाँ

धूप कड़ी है, सूख न जाना तुलसा जी
आँगन-आँगन को महकाना तुलसा जी

दीपक तो उपक्रम है मात्र निवेदन का
जब हम भटकें, राह दिखाना तुलसा जी

एक ही ख़ुशबू-रंगत के हैं सब बिरवे
मंदिर-मस्जिद को समझाना तुलसा जी

साधारण जल की बूँदों ने तुमसे ही
सीखा है अमृत हो जाना तुलसा जी

तुम जैसी ही शोहरत मुझको हासिल हो
घर-घर गूँजे मेरा तराना तुलसा जी

सर्द मौसम है कहीं हलचल तो हो
शाख़ पर पत्ता न हो कोंपल तो हो

उसकी आँखें मेरी आँखें हो गईं
अब वो मेरी आँख से ओझल तो हो

छाँव मत हो छाँव का भ्रम ही सही
हो किसी भी रंग का बादल तो हो

राह तुझको ख़ुद नज़र आ जाएगी
तू किसी की चाह में पागल तो हो

उम्र भर तुझमें भटकता ही रहूँ
तेरी आँखों में घना जंगल तो हो

ये काम है तो बहुत ही कठिन मगर ढूँढें
नदी के तट पे गिरे रेत के वे घर ढूँढें

महक उठे हैं ये काँटे गुलाब की मानिन्द
चलो कि बाग़ में अब तितलियों के पर ढूँढ़े

ये कह रही है मुसाफ़िर से रास्ते की थकन
मैं साथ हूँ तो तेरे, चल नया सफ़र ढूँढें

उसे तो मरना था, वो मर गई, चलो आओ
जो उसके जिस्म पे चटके थे वो शरर ढूँढें

यही तक़ाज़ा है महकी हुई हवाओं का
चलो दरख़्तों के दामन से कुछ समर ढूँढें

पहले जैसा वो प्यार कहाँ
पहले जैसे किरदार कहाँ

शाइर, नदिया, बादल, जोगी
इनका होता घर-बार कहाँ

कुछ भ्रम भी सुन्दर होते हैं
लहरें लेतीं आकार कहाँ

कठपुतली के इन हाथों की
तलवारों में है धार कहाँ

जो वार क़लम कर जाती है
कर पाती है तलवार कहाँ

कब निकला, कब डूँबा चाँद
शह्र में किसने देखा चाँद

जाने किस ग़म में तिल-तिल
रोज़ पिघलता रहता चाँद

सोच रहा हर इक मुफ़लिस
काश रुपय्या होता चाँद

करवा-चौथ को होता है
सबका अपना-अपना चाँद

नभ-सरिता में तैर रहा
कश्ती बनकर आधा चाँद

ना समुन्दर हूँ, ना मैं दरिया हूँ
भीगी पलकों में ठहरा लमहा हूँ

ख़ुश्बुओं के सहन में रहता हूँ
एक ताज़ा हवा का झोंका हूँ

मैं समझता हूँ रुख़ हवाओं के
गरचे, सूखा हुआ-सा पत्ता हूँ

जिनका परिचय है, ना पता कोई
मैं उन्हें रोज़ पत्र लिखता हूँ

मेरा परिचय है मित्र बस इतना
गीत बुनता हूँ, गीत जैसा हूँ

सिर्फ़ सन्नाटा सुलगता है यहाँ साँझ ढले
ताज़गी बख़्श दे ऐसा कोई झोंका तो चले

गाँव के मीठे कुएँ पाट दिए क्यों हमने
इसका अहसास हुआ प्यास से जब होंठ जले

यूँ तो हर मोड़ पे मिलने को मिले लोग बहुत
धूप क्या तेज़ हुई साथ सभी छोड़ चले

आँख में चुभने लगे अब ये रुपहले मंज़र
दिल सुलगता है हरे पेड़ों की ज़ुल्फ़ों के तले

एक अरसे से भटकता हूँ गुलिस्तानों में
कोई काँटा तो मिले जिससे ये काँटा निकले

छीनकर पलकों से तेरे ख़्वाब तक ले जाएगा
एक झोंका याद के सारे वरक ले जाएगा

वक़्त इक दरिया है इसके साथ बहना सीख लो
वरना ये तुमको बहाकर बेझिझक ले जाएगा

रास्ते चालाक थे देते रहे हमको फ़रेब
यह सुरग तक जाएगा और वो नरक ले जाएगा

दूल्हा बनकर हर खुशी के द्वार आँसू एक दिन
आएगा और माँग भर, करके तिलक ले जाएगा

किसको था मालूम मौसम का मुसाफ़िर लूट कर
तितलियों से रंग, फूलों से महक ले जाएगा

हमने ऐसा हादिसा पहले कभी देखा न था
पेड़ थे, पेड़ों पे लेकिन एक भी पत्ता न था

ख़ुशनसीबों के यहाँ जलते थे मिट्टी के चिराग़
था अँधेरा किन्तु तब इतना अधिक गहरा न था

तिर रही थीं मछलियों की सैकड़ों लाशें मगर
जाल मछुआरों ने नदिया में कोई फेंका न था

आदमी तो आदमी था साँप भी इक बार को
दूध जिसका पी लिया उसको कभी डसता न था

ख़ून अपना ही हमें पानी लगेगा एक दिन
प्यास अपनी इस क़दर बढ़ जाएगी सोचा न था

हज़ार वलवले उठेंगे हम जहाँ होंगे
सफ़र में ऐसे कई बार इम्तहाँ होंगे

मेरी ज़बान पे ख़ंजर उछालने वाले
मेरे सफ़र से जो गुज़रे तो हमज़बाँ होंगे

ये जानते तो उजाला न माँगते हर्गिज़
जलेंगे दीप जहाँ मोम के मकाँ होंगे

मेरी निगाह से देखो तो देख पाओगे
गगन के पार कई और आसमाँ होंगे

उतरके देख समुन्दर में, थाह ले तो ज़रा
कि तुझसे ऊँचे हिमालय कई वहाँ होंगे

वो रोज़-रोज़ मेरा इम्तहान लेता है
कभी ज़मीन, कभी आसमान लेता है

ख़ुदा के बाद मुझे बस तू ही डराता है
तू सर झुका के मेरी बात मान लेता है

कहानी अपनी सुनाना मैं चाहता हूँ उसे
शहर में आ के कोई जब मकान लेता है

मैं जानता हूँ कि मुंसिफ़ का फ़ैसला क्या है
कहानी कुछ है, मगर कुछ बयान लेता है

मैं धूप चाहूँ तो बादल बिखेर देगा वो
मैं छाँव माँगूँ, मेरा साएबान लेता है

कुछ न कुछ तो उसके मेरे दरमियां बाक़ी रहा
चोट बेशक भर गई लेकिन निशां बाक़ी रहा

गाँव भर की धूप को हँस कर उठा लेता था जो
कट गया पीपल वही तो क्या वहां बाक़ी रहा

आग से बस्ती जला डाली मगर हैरत है ये
किस तरह बस्ती में मुखिया का मकां बाक़ी रहा

ख़ुश न हो उपलब्धियों पर, यह भी तो पड़ताल कर
नाम है, शोहरत भी है, पर तू कहां बाकी रहा

वक़्त की इस धुन्ध में सारे सिकन्दर खो गए
ये ज़मीं बाक़ी रही, ये आसमां बाक़ी रहा

रातें जोगन, दिन संन्यासी
भर जाते हैं और उदासी

अपनों में, अपने ही घर में
लगते हैं हम लोग प्रवासी

सपने सारे बिखरे-बिखरे
ख़ुशियाँ सारी बासी-बासी

तम के चरण पखार रही है
कैसी है यह पूरणमासी

किसके भय से चुप बैठे हैं
डाल गले में हम सब फाँसी

खिंच गईं जब से दिवारें आँगनों के बीच में
हम निपट नंगे हुए अपने जनों के बीच में

ख़ून देकर भी उसे यदि कर सको कर लो हरा
वो जो रेगिस्तान है दो गुलशनों के बीच में

आपने जिनको बढ़ाया है पुराना जानकर
चूड़ियाँ महफ़ूज़ थीं उन कंगनों के बीच में

अब बहुत ख़ुशहाल है फिर भी वो रहता है उदास
ख़ुश नज़र आता था जो सौ उलझनों के बीच में

रोशनी इसकी अचानक सौ गुना बढ़ जाएगी
आ गया जिस पल ये दीपक आइनों के बीच में

जल में था इक बुलबुला कुछ भी न था
ज़िन्दगी का फलसफ़ा कुछ भी न था

क़ैद थी, दुनिया मेरी मुट्ठी में थी
क़ैद से बाहर हुआ कुछ भी न था

कितने पर्वत थे हमारे बीच में
सोचिए तो फ़ासला कुछ भी न था

मैं निमन्त्रण तो तुम्हें देता मगर
मेरा घर, मेरा पता कुछ भी न था

वक़्त ने क्या-क्या न दिखलाया हमें
दरअसल तो देखना कुछ भी न था

खोजना है खोजिए, मिल जाएगा मेरा पता
बूढ़े पेड़ों के तनों पर अब भी है लिक्खा हुआ

ख़ुदग़रज़ दुनिया से मैंने आज तक चाहा भी क्या
कोई स्वर, कोई ग़ज़ल या कोई मुखड़ा गीत का

रूह में ताज़ा है जिसकी सौंधी ख़ुश्बू आज भी
उस शह्र में अब मुझे कोई नहीं पहचानता

मेरे बचपन से मुझे इक बार जो मिलवा सके
ढूँढता फिरता हूँ मैं जादू का ऐसा आईना

हमने दीवारें गिराई थीं कि हम होंगे क़रीब
और बढ़ता ही गया लेकिन दिलों का फ़ासला

फिर अँधेरा मरते-मरते जी गया
सूर्य अपनी रोशनी ख़ुद पी गया

उसने ही सम्मान पाया अर्श से
आँधियों के द्वार तक जो भी गया

जब लगी सच्ची लगन आराध्य से
दिल गया, जां भी गई, सिर भी गया

सिन्धु ने सन्देश भिजवाये मगर
मैं गया, जब भी, नदी तट ही गया

मृत्यु निश्चित थी अमिय पीता अगर
मैं हलाहल पी गया, सो जी गया

रात भर रोई है, तड़पी है नदी
याद सागर की उसे आती रही

दर्द से हम हैं, कि हमसे दर्द है
यह पहेली है अभी उलझी हुई

जब भी देखा, अजनबी ख़ुद को लगा
आईने में है या मुझमें है कमी

चाँदनी है क्या ये उनसे पूछिये
जिनकी आँखों में नहीं है रोशनी

इस हथेली पर लिखो मत गीत तुम
मेट दी है हमने रेखा भाग्य की

नियम सब टूट जाते हैं, चलन की सुध नहीं रहती
कि जब मन, मन से मिलता है तो तन की सुध नहीं रहती

हृदय के देवता जब भी कभी साकार होते हैं
भजन की सुध नहीं रहती नमन की सुध नहीं रहती

सफ़र मुश्किल सही लेकिन, न मुड़कर देखना हर्गिज़
नज़र आ जाए मंज़िल तो थकन की सुध नहीं रहती

मदिर मधुकर में जब मकरन्द की तृष्णा उमड़ती है
हज़ारों शूल चुभते हैं चुभन की सुध नहीं रहती

परिन्दा पंख पाकर जब भी पहली बार उड़ता है
धरा को भूल जाता है गगन की सुध नहीं रहती

भोर के कुछ उजले-उजले गीत जो शब भर लिखे
घुप सियह रातों में मैंने जागकर अक्सर लिखे

ज़िन्दगी तुझको जिया, तुझको लिखा कुछ इस तरह
जिस तरह कोई किसी का नाम पानी पर लिखे

पत्थरों की ज़द में हैं जब तक कि ये आज़र सभी
किसकी जुर्अत है जो पत्थर को यहाँ पत्थर लिखे

मेरी फ़ितरत बहते रहना थी, बहा मैं उम्र भर
उसकी मर्ज़ी वो मुझे दरिया लिखे, सागर लिखे

कशमकश में मुब्तिला है सत्य का वो पक्षधर
होश को खोकर लिखे, या होश में आकर लिखे

जब ख़ुद को तनहा पाएँगे, याद तुम्हारी आएगी
सुधियों की साँकल खोलेंगे, याद तुम्हारी आएगी

मन के आँगन से पुरवा के मादक झोंके चुपके से
आँख बचाकर जब गुज़रेंगे, याद तुम्हारी आएगी

हर सावन में नैन हमारे टूट-टूटकर बरसेंगे
घर-पर्वत जंगल डूबेंगे, याद तुम्हारी आएगी

दिन-भर हम मशगूल रहेंगे दुनियादारी में लेकिन
साँझ ढले जब घर लौटेंगे, याद तुम्हारी आएगी

जितने दिन लेकर आए हैं, उतने दिन तो जीना है
किन्तु कलेण्डर जब बदलेंगे, याद तुम्हारी आएगी

था कभी गुलज़ार, अब बंजर हूँ मैं
इक पुरानी क़ब्र का पत्थर हूँ मैं

अब तो तन्हाई भी है, तन्हा भी हूँ
अब तो पहले से बहुत बेहतर हूँ मैं

टूटते पत्ते ने ये रुत से कहा
आनेवाली नस्ल का रहबर हूँ मैं

हैं जुदा बस नाम, दोनों एक हैं
आप मुझमें, आपके भीतर हूँ मैं

अश्क ने पलकों से ये हँसकर कहा
कसमसाती याद का झूमर हूँ मैं

आँसुओं का ज़लज़ला अच्छा लगा
तपती आँखों को छुआ अच्छा लगा

वो हमारे बीच रहकर भी न था
आईने का टूटना अच्छा लगा

अब के सावन में भी जाने क्यों हमें
बादलों का रूठना अच्छा लगा

आग बरसाती हुई उस धूप में
नीम का इक पेड़ था, अच्छा लगा

आँधियों के गाँव में आया नज़र
इक दीया जलता हुआ, अच्छा लगा

है बला का उछाल पानी में
उठ रहे हैं ख़याल पानी में

जल भी सकते हैं, इतनी देर तलक
हाथ अपने न डाल पानी में

हम अहिंसक उसे कहें कैसे
जिसने फेंका है जाल पानी में

काग़ज़ी कश्तियों की शक्लों में
ख़्वाब अपने न डाल पानी में

देखते-सोचते ही फिर कोई
डूबने को है साल पानी में

कुछ अनोखा है आजकल मुझमें
मैं ग़ज़ल में हूँ और ग़ज़ल मुझमें

डूबकर देख एक पल मुझमें
ढूँढ ले मुश्किलों के हल मुझमें

तू नुमाइश से मत रिझा मुझको
है अभी शेष आत्म-बल मुझमें

काट मत धूप की शिकायत पर
कल को लगने हैं मीठे फल मुझमें

तू समुन्दर है, फिर भी खारा है
मैं हूँ नदिया, है मीठा जल मुझमें

ये नगर देखना जिस रोज़ भी अपना होगा
हमको हर शख़्स से बच-बच के गुज़रना होगा

हुस्ने-शोहरत भी फ़रेबी है उजाले की तरह
अपने साये से भी हर पल हमें डरना होगा

मोतियों की तरह अल्फ़ाज़ ढलेंगे लेकिन
सीप की शक्ल में अहसास को ढलना होगा

उम्र भर हमने दरख़्तों को गिराया है तो अब
हमको तपते हुए बालू पे भी चलना होगा

साँझ से पहले तुझे घर पः पहुँचना है, अगर
छोड़ कर छाँव, कड़ी धूप में चलना होगा

दुःखों से भागने पर, दुःख कभी भी कम नहीं होते
घर अपना त्यागने वाले सभी गौतम नहीं होते

रक़ीबों के करम से सर-बलन्दी हमने पाई है
हबीबों से घिरे रहते तो हम फिर हम नहीं होते

तेरे आँसू हैं आँखों में, लबों पर है हँसी तेरी
जो तू मुझमें नहीं होता, तो ये मौसम नहीं होते

सितारों की तरह सुधियों के दीपक झिलमिलाते हैं
जो दिन में छुप तो जाते हैं मगर मद्धम नहीं होते

चराग़ों की तरह शब भर ये आँखें जगती रहती हैं
मगर तन की गुफ़ाओं के अँधेरे कम नहीं होते

चुप की बाँह मरोड़े कौन
सन्नाटे को तोड़े कौन

माना रेत में जल भी है
रेत की देह निचोड़े कौन

सागर सब हो जायँ मगर
साथ नदी के दौड़े कौन

मुझको अपना बतलाकर
ग़म से रिश्ता जोड़े कौन

भ्रम हैं, ख़्वाब सलोने पर
नींद से नाता तोड़े कौन

उपवन नहीं रहा कि वो मधुबन नहीं रहा
पौधों के रुख़ पे अब तो हरापन नहीं रहा

मौसम की इस बदलती-सी फ़ितरत को क्या कहें
गंगा का जल भी पहले-सा पावन नहीं रहा

तुलसी कहाँ उगाएँ कि दीपक कहाँ धरें
पक्के मकान में तो वो आँगन नहीं रहा

जब से गिरोहबन्द हुई हैं ये ख़ुशबुएँ
गाता हुआ, वो झूमता सावन नहीं रहा

देने लगे हैं दाद यहाँ चुटकुलों को लोग
गीतों को गुनगुनाने का अब मन नहीं रहा

आजकल हम लोग बच्चों की तरह लड़ने लगे
चाबियों वाले खिलौनों की तरह लड़ने लगे

ठूँठ की तरह अकारण ज़िन्दगी जीते रहे
जब चली आँधी तो पत्तों की तरह लड़ने लगे

कौन-सा सत्संग सुनकर आये थे बस्ती के लोग
लौटते ही दो क़बीलों की तरह लड़ने लगे

हम फ़कत शतरंज की चालें हैं उनके वास्ते
दी ज़रा-सी शह तो मोहरों की तरह लड़ने लगे

इससे तो बेहतर था हम जाहिल ही रह जाते, मगर
पढ़ गए, पढ़कर दरिन्दों की तरह लड़ने लगे

ख़ुद को अपने से अलग कर, जब कभी सोचूँ हूँ मैं
दूर तक, बस दूर तक बिखरा हुआ पाऊँ हूँ मैं

लम्हा-लम्हा फूटता है, मुझमें इक ज्वालामुखी
अपने अहसासात की ही आँच में झुलसूँ हूँ मैं

हाँ वो सूरज है मगर मैं भी तो उससे कम नहीं
रोज़ निकलूँ हूँ सुबह को, शाम को डूबूँ हूँ मैं

मुझको ये मालूम है वो एक झोंका था मगर
कैसा पागल हूँ जो अब तक रास्ता देखूँ हूँ मैं

है बग़ावत शायरी, ख़ुद से हो या फिर वक़्त से
एक बाग़ी की तरह हर शे'र से जूझूँ हूँ मैं

कभी तिनके, कभी पत्ते, कभी ख़ुश्बू उड़ा लाई
हमारे घर तो आँधी भी कभी तनहा नहीं आई

लचकती डाल को ही सबने लचकाया है इस जग में
सबब टहनी के झुकने का ये दुनिया कब समझ पाई

मेरा उनसे बिछुड़ना और मिलना ख़्वाब था जैसे
लिपट कर रोई है, ताउम्र मुझसे मेरी तन्हाई

अजब फ़नकार है, गढ़ता है शक्लें सैकड़ों हर दिन
मगर सूरत कभी कोई किसी से कब है टकराई

किसी के मानने, ना मानने से कुछ नहीं होता
उसी का नूर है सब में, उसी की सब में रानाई

चन्द पल तेरी बाँहों में हम जी लिए
यूँ लगा जैसे जन्मों-जनम जी लिए

फूल ने शाख़ से टूटते दम कहा
"कम जिए, पर तुम्हारी क़सम जी लिए"

*बादशाहों को भी कब मयस्सर हुई
ज़िंदगानी जो अहले-क़लम जी लिए

घर का अहसास उभरा जो परदेस में
जितने ग़म थे सभी एकदम जी लिए

*। विद्वत्वं च नृपत्वं च नैव तुल्यं कदाचन ।
स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान सर्वत्र पूज्यते ॥
-विष्णु शर्मा (पंचतंत्र)

जयान्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः
नास्ति येषां यशः काये जरामरणं भयम् ॥
-भर्तृहरि

कभी सपने, कभी आँसू, कभी काजल की तरह
चश्म-दर-चश्म भटकता फिरा बादल की तरह

ज़िन्दगी मेरी मरुस्थल है, हर एक बूँद मुझे
रोज़ दौड़ाती रही है किसी पागल की तरह

ऐसा लगता है कहीं पास, बहुत पास है तू
सरसराती है हवा जब तेरे आँचल की तरह

चन्द रोज़ा हैं ये ख़ुशियाँ तू इन्हें क़ैद न कर
मुट्ठियों से ये फिसल जाएँगी मख़मल की तरह

धूप दुश्मन के भी हिस्से की उठा लेगा अगर
लोग पूजेंगे तुझे गाँव के पीपल की तरह

अपनी बूढ़ी आँखों से कल, बरगद ने सब देखा है
कहाँ गिरा लाजो का आँचल, बरगद ने सब देखा है

तानों से तँग आकर आख़िर गाँव की मीठी पोखर ने
धीरे-धीरे ओढ़ी दलदल, बरगद ने सब देखा है

मौसम जिन खेतों में आकर डेरा डाला करते थे
खेत हुए वो कैसे जंगल, बरगद ने सब देखा है

कल तक सारे मज़हब जिसको झुक कर शीश नवाते थे
किसने काटा है वो पीपल, बरगद ने सब देखा है

मुंसिफ़ बने हुए हैं कव्वे, गिद्धों की पंचायत में
अपराधिन-सी खड़ी है कोयल, बरगद ने सब देखा है

चाँदनी रातों में अक्सर बोलते हैं
ख़ुशनुमा ख़ामोश मंज़र बोलते हैं

बोलते हैं जब भी रहबर बोलते हैं
फूल से लहजे में पत्थर बोलते हैं

मैं बहुत ख़ामोश होता हूँ तो मुझसे
घर के सन्नाटे लिपटकर बोलते हैं

जब ज़बां पर क़ैंचियाँ लटकी हुई हों
धार पा जाते हैं अक्षर, बोलते हैं

पत्थरों में प्राण भरते हैं जो अक्सर
ऐसे लोगों को 'सुख़नवर' बोलते हैं

गीत

देखना है—
कब तलक जल-दीप
लहरों से लड़ेगा

कँपकँपाती उँगलियों को चूमकर
वेग से ये चल दिया लो झूम कर
चाँद-सा
भागीरथी के माथ पर
झिलमिल तिरेगा...

राम का अन्तर्द्वंद्व

सीते! मम् श्वास-सरित सीते
रीता जीवन कैसे बीते

हमसे कैसा ये अनर्थ हुआ
किसलिए लड़ा था महायुद्ध
सारा श्रम जैसे व्यर्थ हुआ
पहले ही दुख क्या कम थे सहे
दो दिवस चैन से हम न रहे

सीते! मम् नेह-निमित सीते
रीता जीवन कैसे बीते

मर्यादाओं की देहली पर
तज दिया तुम्हें, मेंहदी की जगह
अंगारे धरे हथेली पर
ख़ामोश रहे सब ऋषी-मुनी
सरयू भी उस पल ना उफनी

सीते! मम् प्रेम-तृषित सीते
रीता जीवन कैसे बीते

सबने हमको दोषी माना
कल दर्पण के सम्मुख हमने
निज बिंब लखा, था अनजाना
हम दोषी-से, अपराधी-से
जीवित हैं एक समाधी-से

सीते! मम् मौन-व्यथित सीते
रीता जीवन कैसे बीते

हम काश कहीं धोबी होते
चल देते तजकर राम-राज्य
जब मन रहता हँसते-रोते
लेकिन हम तो महाराज रहे
सिंहासन की आवाज़ रहे

सीते! मम् हृदय-निहित सीते
रीता जीवन कैसे बीते

कम से कम तुम तो समझोगी
अपने राघव की निर्बलता
जग दे, तुम दोष नहीं दोगी
जब वृक्ष उगाना होता है
इक भ्रूण दबाना होता है

सीते! मम् राम-चरित सीते
रीता जीवन कैसे बीते

कुआँ

अधपटा कुआँ पिछवाड़े का
मुझको देखा तो चौंक उठा–
"हो गए पुत्र तुम इतने बड़े!
बैठो, कैसे रह गए खड़े।"
मैं उसकी 'मन' पर बैठ गया
सब पहले-सा, कुछ भी न गया
कुछ पल दोनों चुपचाप रहे
आख़िर मेरे ही होठ खुले

पूछा–"बाबा! तुम कैसे हो?"
उत्तर आया–"कुछ मत पूछो"

फूलों-से चेहरों का दर्पण
बन करके मैं इतराता था
पल में ख़ाली हो जाता था
पल भर में ही भर आता था
मुझ पर भी लोग धूप-अक्षत
फल-फूल चढ़ाने आते थे

ख़ाली आँचल फैलाते थे
आशीषें लेकर जाते थे
अब मेरा यह घट रीता है
अब कौन मेरा जल पीता है

अब बूँद-बूँद को तरसाते
लोहे वाले नल को पूजो

पूछी तूने जो कुशल-क्षेम
फिर आज मेरा मन भर आया
तू महानगर से भी लौटा
तो प्यास लिए ही घर आया
अब मैं भी कहाँ तेरे जलते
अधरों पर जल धर पाऊँगा
तेरे मन के ख़ालीपन को
अब कैसे मैं भर पाऊँगा
संगी-साथी सब छोड़ गए
पीपल-बरगद मुँह मोड़ गए

अब अपनी प्यास बुझाने को
अधरों पर धर ले बालू को

जल-दीप

देख़ना है—
कब तलक जल-दीप
लहरों से लड़ेगा

कँपकँपाती उँगलियों को चूम कर
वेग से ये चल दिया लो झूम कर
चाँद-सा
भागीरथी के माथ पर
झिलमिल तिरेगा

है अमावस की निशा तम है घना
जलगगन दमका रही है वर्तिका
देखकर
इसका सलोना रूप
जल, जल-जल मरेगा   यमक पुनरुक्ति प्रकाश युगपद

है भँवर बेताब जाने कब डुबा दे
कौन सा झोंका हवाओं का बुझा दे

निज जनों से
इस क़दर प्रतिरोध
यह कब तक सहेगा

देखना है
कब तलक जल-दीप
लहरों से लड़ेगा

हंसों के वंशज

दो रोटी की ख़ातिर जीवन
क्यों दफ़्तर के नाम कर दिया?

हंसों के वंशज हैं लेकिन
कव्वों की कर रहे ग़ुलामी
यूँ अनमोल लम्हों की प्रतिदिन
होती देख रहे नीलामी

दर्पण जैसे निर्मल मन को
क्यों पत्थर के नाम कर दिया?

पाने का लालच क्या जागा
गाँठ की गठरी भी खो बैठे
स्वाभिमान, सम्मान, सम्पदा
गिरवी रख कँगले हो बैठे

हरा-भरा संसार न जाने
क्यों पतझर के नाम कर दिया?

व्यस्तता

रौशनी के सिन्धु में औक़ात
क्या तनहा दिए की

पास है किसके भला उपचार
मन की उलझनों का
भूल बैठी रास्ता पुरवा
सघन चन्दन-वनों का

अब नहीं करती प्रतीक्षा देह
मन के डाकिए की

व्यस्तताओं के नगर में आज
फ़ुरसत किसके बस में
तोड़ डाले मौसमों ने भी
सभी वादे औ' क़समें

अब ग़ज़ल दिखती कहाँ है दोस्त!
सच्चे क़ाफ़िए की

हम हो गए यतीम

ना आँगन में किसी के तुलसी
ना पिछवाड़े नीम
सूख गए सब ताल-तलय्या
हम हो गए यतीम

ललुआ जब से शह्र में जाके
सीखा ए बी सी डी
गिटपिट-गिटपिट करता फिरता
सुनता नहीं किसी की
ना काहू से राम-राम, ना काहू से रहीम
हम हो गए यतीम

लक्ष्मण-रेखाएँ नातों की
अब न किसी को भातीं
चुभने लगा सिन्दूर माँग में
चूड़ियाँ गड़-गड़ जातीं
धर्म-कर्म की सीख हुई है बूढ़ों की तालीम
हम हो गए यतीम

बारहमासो

पर्वतों की छाँव में
झरनों के ग़ाँव में
किरणों की डोर ढलती साँझ को है माप रही
पर्वत की ओट कहीं नीमा अलाप रही

बारहमासो मोरी छैला
बेड्यू पाको मोरी छैला

फूल्या बुराँस चैत महक उठी फ्यूलड़ी
पिऊ-पिऊ पुकारती बिरहन म्यूलड़ी
सूनी-सूनी आँखों से राहों को ताक रही
पर्वत की ओट कहीं नीमा अलाप रही

बारहमासो मोरी छैला
बेड्यू पाको मेरी छैला

आडुयों की गन्ध देह में अमीय घोल रही
कुमुदनी मुँदी हुई पाखुरियाँ खोल रही

सुधियों में खोई-खोई भेड़ों को हाँक रही
पर्वत की ओट कहीं नीमा अलाप रही

बारहमासो मोरी छैला
बेड्यू पाको मोरी छैला

पहाड़ो ठण्डो पानी

ऊँची-नीची राहों को ज़िन्दगी की मापती
लकड़ियों के बोझ से गोरी बाँहें काँपती
टेसू के फूल से अधरों से बाँचती
पहाड़ो ठण्डो पानी तेरी-मेरी बातें जानी

भेड़ों के बीच में खनखनाता बचपन
तकली की धुन पे थिरकता है यौवन
झुके-झुके नयनों ने कह दी इक कहानी

पर्वतों के आँचल में बहती हुई धौली
बिन कहे ही जान गई बिरहन की बोली
कंत नहीं आए, आया चैत का महीना
मन को है साल रही घुघती की बानी

शाखें हैं झुक आईं, पक गईं खुमानियाँ
प्रियतम सँग बीते क्षण बन गए कहानियाँ
झरनों की रुनझुन में डूबी हुई नीमा
खोज रही खोए हुए प्यार की निशानी

पहाड़ो ठण्डो पानी तेरी-मेरी बातें जानी

घुघती टेर लगाती रहियो

कौन जाने कब किस पगडंडी से
दीखे मोरा सिपहिया
घुघती टेर लगाती रहियो

धौल गंग तू ही मेरी सखी है सहेली
साथ-साथ दौड़ी मेरे संग-संग खेली
तेरा गात छू के मैंने वचन दिए थे
पाप किए थे या पुण्य किए थे
कौन जाने कब साँस-डोर टूट जाए
डोर टूट जाए मोसों भाग्य रूठ जाए
कि बहना धीर बँधाती रहियो
घुघती टेर लगाती रहियो

अबके बरस बड़ी बरफ़ पड़ी है
जैसे सारी घाटी चाँदी से मढ़ी है
हिम से घिरी हैं ये शैल-शिलाएँ
जले हैं निगोड़ी और मुझे भी जलाएँ
अंग-अंग जैसे जंग छिड़ी है

पर्वत की नदिया जैसी देह चढ़ी है
घटाओ हिम बरसाती रहियो
घुघती टेर लगाती रहियो

दोहे

तेरे जैसी ही हुई, मैं शादी के बाद
आती तो होगी तुझे, 'मिट्ठू' मेरी याद

इनकी बाँहों में बसा, स्वर्ग सरीखा गाँव
बाबूजी इक पेड़ हैं, अम्मा जिसकी छाँव

हम तो सोए चैन से, पल-पल देखे ख़्वाब
माँ कितना सोई-जगी, इसका कहाँ हिसाब

आज बहुत निर्धन हुआ, कल तक था धनवान
माँ रूठी तो यूँ लगा, रूठ गया भगवान

क्या जाने क्या खोजता, मरुथल में मृगछौन
बाहर-बाहर शोर है, भीतर-भीतर मौन

माँ से बढ़कर कुछ नहीं, क्या पैसा क्या नाम
चरण छुए औ' हो गए, चारों तीरथ-धाम

❖

तेरे जैसी ही हुई, मैं शादी के बाद
आती तो होगी तुझे, 'मिट्ठू' मेरी याद

चलियो सीना तानकर, बिटिया चली विदेश
गंगा-तट तज आईयो, सब चिन्ता, सब क्लेश

जिस खूँटे से बाँध दो, उससे ही बँध जाय
बाबुल तेरी लाड़ली, इक गूँगी-सी गाय

कल तक सब पर राज था, क्या आँगन क्या द्वार
सात भाँवरें ले हुई, सात समन्दर पार

कैसे रस्म-रिवाज हैं, कैसा यह दस्तूर
देश, विदेश बना गया, चुटकी भर सिन्दूर

बाबुल अब होगी नहीं, भैया के सँग जंग
डोर तोड़ अनजान पथ, उड़कर चली पतंग

बाबुल तेरे गाँव को, कैसे जाऊँ भूल
रोम-रोम में देह के, रची इसी की धूल

ख़ुश्बू हैं ये बाग़ की, रंगों की पहचान
जिस घर में बिटिया नहीं, वह घर रेगिस्तान

❖

बँधे हुए जिस पर कई, रंगों के रूमाल
हरी-भरी है आज भी, यादों की वह डाल

ताज़ा हैं सब आज भी, सूखे हुए गुलाब
शब्द-शब्द महका रही, सुधियों रची किताब

❖

मेरा और समुद्र का, इक जैसा इतिहास
जल ही जल है कंठ तक, फिर भी बुझे न प्यास

क्या पहले कुछ कम जले, विरहानल में प्राण
फागुन तू भी आ गया, ले फूलों के बाण

दीवारों को पढ़ तनिक, चौखट से कर बात
माना लम्बी है मगर, कट जाएगी रात

महानगर की धूप में, जब भी झुलसे पाँव
याद बहुत आई मुझे, पीपल तेरी छाँव

संकेतों में कर रहे, सबसे मन की बात
झूम-झूमकर बावरे, ये पीपल के पात

मत काटो इस पेड़ को, हो जाओ न यतीम
काल-पात्र है अनलिखा, आँगन का यह नीम

❖

नदियाँ, मीठी बावड़ी, चाँदी जैसी झील
धीरे-धीरे हो गईं, दलदल में तब्दील

धरती से कि किसान से, हुई किसी से चूक
फ़सलें उजड़ीं खेत में, लहकी हैं बन्दूक

कहाँ नजूमी, ज्योतिषी, पंडित, संत, फ़क़ीर
अब बन्दूकें बाँचतीं, लोगों की तक़दीर

अमरबेल से फूलते, नित सरमाएदार
निर्धन को ही मारती, मँहगाई की मार

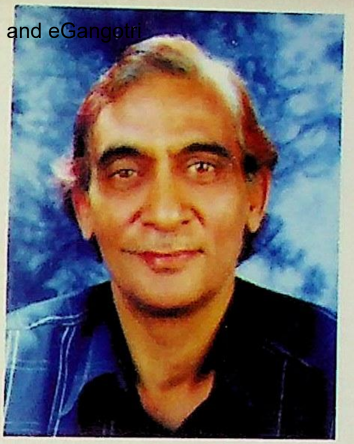
किसकी छवि नयनों बसे, कौन बने आराध्य
चेह्‌रे भी अब हो गए, विज्ञापन के साध्य

घर में जैसे बेवजह, पड़ा हुआ सामान
अधरों पर कुछ इस तरह, टँगी हुई मुस्कान

आँख खुलें तो चाहिए, चाय और अख़बार
बेमानी हैं आँकड़े, चौदह मरे कि चार

जोकर, बाज़ीगर हुए, एक जगह एकत्र
नौटंकी का खेल है, संसद का हर सत्र

❖ ❖ ❖



राजगोपाल सिंह

जन्मतिथि : एक जुलाई 1947

जन्मस्थान : बिजनौर (उ.प्र.)

माँ : श्रीमती जयरानी

बाबूजी : श्री राजपाल सिंह

काव्य गुरु : श्री ब्रह्मानन्द शर्मा 'जलीस'

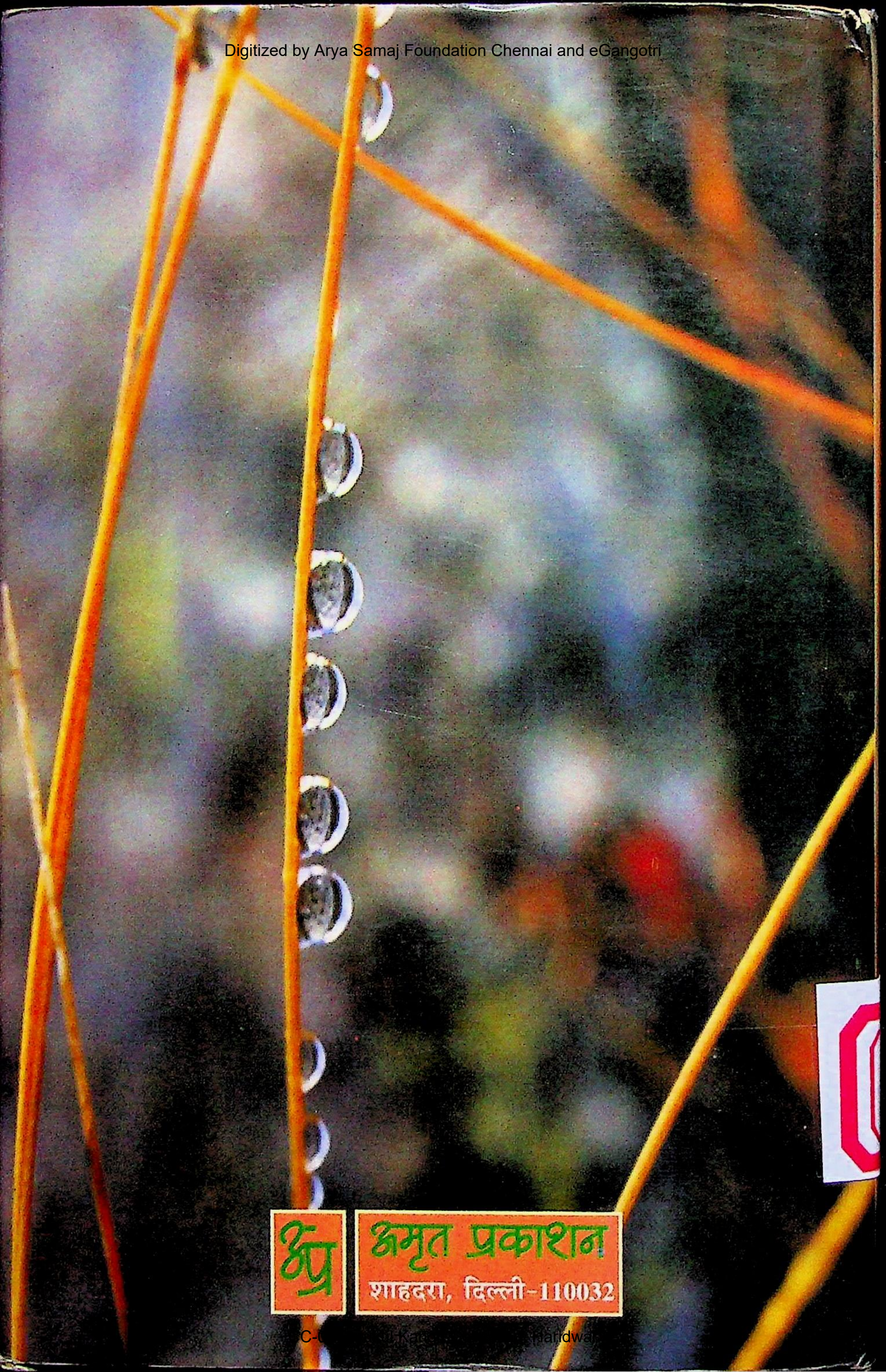
कृतियाँ :
- ज़र्द पत्तों का सफ़र (ग़ज़ल-संग्रह)
- ख़ुश्बुओं की यात्रा (ग़ज़ल-संग्रह)
- बरगद ने सब देखा है (ग़ज़ल-संग्रह)

सम्पादन : हिन्दी की चर्चित ग़ज़लें

कैसेट : 'परवाज़'

सम्पर्क :
- एच-340, नानकपुरा, नई दिल्ली - 110021
- 'सविता कुञ्ज', बी-39, न्यू गोपालनगर, ढाँसा रोड, नजफ़गढ़, नई दिल्ली

दूरभाष :
- 55664268,
- मो. 9810831831



अप्र
अमृत प्रकाशन
शाहदरा, दिल्ली-110032